August 2014 IJRSS Volume 4, Issue 3 ISSN: 2249-2496

उत्तराखण्ड के लोक–साहित्य एवं लोक–कलाओं का संरक्षण

डॉ0 प्रीति
हिन्दी विभाग
हिन्दू कन्या महाविद्यालय, सीतापुर–261001 (उ0प्र0)

देवभूमि उत्तराखण्ड में लोक–साहित्य व लोक–कलाओं की समृद्धिशाली परम्परा है। दिव्य प्राकृतिक सौन्दर्य से परिपूर्ण इस पावन भूमि को प्राचीन काल से ही देवभूमि कहा गया है तथा यहाँ की संस्कृति देव–संस्कृति कहलायी। गंगा की गोद हिमालय की छाया, ऋषियों की तपोभूमि से युक्त उत्तराखण्ड में विभिन्न अवसरों पर उल्लास से झूम कर जब मानव अपने भावों को अभिव्यक्त करता है, तब लोक–गीतों व गाथाओं की गूँज से खेत, नदियाँ, पर्वत व घाटियाँ मुखरित हो उठती हैं। यहाँ के लोक–नृत्य, लोक–नाट्य, लोक–वाद्य तथा लोक–संगीत की धुनें अपना विशिष्ट महत्त्व रखते हैं।

यहाँ के लोक–गीतों में– शकुनाखर, पाँवड़ा, बाजूबन्द, जागरगीत, न्यौली, झोड़ागीत, झुमैला, छपेलीगीत, बैरगीत, समनागीत, चैतीगीत, ठुलखेल गीत आदि; लोक– गाथाओं में –राम, कृष्ण, गौरा–महेसर, आदि पौराणिक गाथायें तथा हरू–सेम की झोड़ा गाथा, पाँवड़ा गाथा, रमौल गाथायें, भड़ौगाथा, निजन्धरी गाथा आदि; लोक– चित्रों में – ऐपण, भित्ति चित्र, पिछौड़ा अंकन आदि; लोक–नृत्य में –पाण्डव नृत्य, होरी नृत्य, झोड़ा नृत्य आदि लोक नाट्य में –स्वाँग अत्यन्त प्रसिद्ध हैं। इसके साथ ही संगीत की धुनें तथा वाद्ययन्त्र भी अपनी विशिष्ट पहचान रखते हैं।

उत्तराखण्ड के लोक–गीत

1. धार्मिक गीत – उत्तराखण्ड के लोक–गीतों में धार्मिकता का प्राधान्य है। स्त्रियाँ विविध संस्कारों के गीत गाती है। इनमें शकुनाखर और न्यूतणों प्रमुख हैं। गढ़वाल में ऐसे गीतों को 'मांगल' कहते हैं। किसी कार्य को निर्विघ्न सम्पन्न करने हेतु ये 'मांगल' गीत गाये जाते हैं। यथा –

शकुना दे, शकुना दे, सब सिद्धि
काज ए अदि नीकों, शकुना बोल दईणा
बाज छन शंख शब्द, दैणी तीर भरीयो कलेस
अति नीको सो रंगीलो पाटल अंजली कमल को फूल

लोक में गीतों द्वारा शुभ कार्यों में देवताओं को निमन्त्रण दिया जाता है। जैसे –

पैल्हेन्यूते, पैल्हेन्यूते वेद मुखी बरमा।
आज चंदाबरमा जी को काज।

उक्त गीत में ब्रह्मा जी को आमन्त्रित किया गया है।

विवाह–संस्कार में वर–पक्ष एवं कन्या–पक्ष दोनों प्रकार के गीतों का प्रचलन है। विवाह के समय दोनों पक्षों में उत्साह, हास–परिहास व प्रसन्नता दृष्टिगोचर होती है। वहीं कन्या की विदाई के समय कन्या–पक्ष में करुणा पूर्ण मार्मिक गीतों का गायन किया जाता है, जिनमें विदाई की वेदना का निदर्शन होता है।

'जागरगीत' जागरण से सम्बन्धित है। 'जागर' गीत के गायक को 'जागरिया' कहा जाता है। देवताओं के जागरण में डमरू, थाली, ढोल, दमामा, घुड़का आदि विभिन्न वाद्यों के साथ गायन करते हुए नृत्य का विधान है। गंगनाथ नागराज, नरसिंह, देवी, पांडव, क्षेत्रपाल, भैंरो, अंछरी, महासू, दुर्योधन, हरू–सैम, गोरिया, भोलनाथ, नंदादेवी, बरमीभूत आदि देवी–देवताओं के रूप में जागरों को नचाया जाता है। भैंरवनाथ का एक जागर दर्शनीय है –

रक्षा करी बटुकनाथ भैरों
चौड़िया, नारसिंह, वीर नौरतिया नारसिंह

कुमाऊँ मण्डल में 'जागरण के लिए 'जागो' गीत प्रसिद्ध है, जिनका वर्ण्य–विषय देवताओं के अवतरण की कथा है। जागरण–गीत रात्रि में गाये जाते हैं अतः इन्हें 'जागा' भी कहते हैं। नौ रात्रि में होने वाले जागरण में गाये जाने वाले गीतों को 'नौर्त' भी कहा जाता है। ये गीत देवी के मन्दिर में गाये जाते हैं।

'झोड़ागीत' धर्म, प्रेम, पारिवारिक तथा अन्य सामयिक विषयों को लेकर गाये जाते हैं। इसमें गायक गीत गाता है तथा अन्य लोग इसे दोहराते हैं।

'ढूरिंग गीत' अनिष्टकारी आत्माओं से छुटकारा पाने का गीत होता है। जब सीमांत क्षेत्र के लोग शीतकाल में ऊँचाई वाले गाँवों को छोड़कर घाटियों में जाते हैं, तो इन गीतों का आयोजन करते हैं तथा नृत्य–गान करते हुए गाँव छोड़ते हैं।

2. ऐतिहासिक–गीत –

उत्तराखण्ड में 'पँवाड़ा' या 'भड़ौ' प्रसिद्ध लोक–गीत है। ये ऐतिहासिक कथाओं पर आधारित है, जिनमें अनेक वीरों के उपाख्यान हैं– माधो सिंह भण्डारी, त्रिमलचंद, जीतू बगड़वाल आदि के पवाँड़े विशेष ख्याति रखते हैं। त्रिमल चंद का पवाँड़ा इस प्रकार है–

'दिगौ अल्मौड़ी का राज होलो, तिरमोली चना।

चना, विक्रम का च्यल छोलो तिरमोली चना।

लेखियो कागज चना तिरमोली चना।

चना, पढ़ायो जोलियो हिना तिरमोली चना।

खेल–तमाशों के अवसर पर भड़यगीत गाया जाता है। ये गीत बसन्त पंचमी से लेकर संक्रांति तक स्त्रियों के द्वारा गाये जाते हैं। स्त्रियाँ रात्रि के समय खुले आँगन में गोल घेरे में खड़ी हो जाती हैं। घेरे के आधे–आधे दो हिस्से करके एक–दूसरे के कंधों पर हाथ रख कर नृत्य करती हुई गीत गाती हैं।

3. प्रश्नोत्तर–शैली में गाये जाने वाले गीत –

ये गीत विभिन्न विषयों से सम्बन्धित होते हैं। इनमें एक ओर प्रश्नकर्ता गीत के माध्यम से प्रश्न करता है। दूसरी ओर से उत्तर देने वाला गीत शैली में उत्तर देता है। ऐसे गीतों में न्यौली, छपैली, दूड़ागीत, बाजूबंद, बैरगीत आदि प्रसिद्ध हैं।

'न्यौली' श्रृंगारिक गीत है, इसमें विरह की समस्त दशाओं का मार्मिक अंकन रहता है। ये गीत प्रश्नोत्तर शैली में गाये जाते हैं। घास काटते हुए लकड़ी बटोरते हुए या अन्य कार्य करते हुए एक ओर से पहले पुरुष न्यौली गीत आरम्भ करता है, फिर स्त्री उसका उत्तर देती है। कुमाऊँ के डोटी, पिथौरागढ़, सोर और सीरा में इनका विशेष प्रचलन है। इन गीतों में प्रायः भाग्यवाद, सहनशीलता, प्रेम–विरह, ऋतु–वर्णन तथा स्थानीयता का चित्रण रहता है।

'छपेली गीत' विवाह, मेलों, उत्सवों आदि के अवसर पर आयोजित किया जाता है। ये भी प्रश्नोत्तर के रूप में गाये जाते हैं। इसमें हुड़क बजता है और साथ में एक नर्तक होता है।

'छोपतीगीत' संवाद प्रधान लोक–गीत है। इसमें गायक दो दल में बँट जाते हैं। एक दल गीत गाता है तथा उसकी अन्तिम पंक्ति दोहरा कर दूसरा दल गीत का आरम्भ करता है। ये मुख्यतः श्रृंगार प्रधान होते हैं।

'दूड़ागीत' भी प्रश्नोत्तर–शैली में गाया जाता है। इसमें पर्वत पर घास काटती युवती तथा दूर पशु चराते हुए युवक के मध्य संवाद का मुधर चित्रण होता है।

गढ़वाल–क्षेत्र में 'बाजूबंद' नामक चरवाहा गीत अत्यन्त प्रसिद्ध है। इसमें जीजा–साली, देवर–भाभी आदि स्त्री–पुरुषों की गीत परक प्रेम–संवाद का चित्रण होता है। एक बाजूबन्द गीत की पंक्तियाँ इस प्रकार हैं :–

फूली जाली जई

बाज काटदारी कै गौं की छई

बाबुल की कूची

की भी गौं की होली तू क्या कूर्दू पूछी?

(बांज काटने वाली तुम किस गाँव की हो? मैं किसी भी गाँव की हूँ। तुम्हें पूछने से क्या?)

'लामण गीत' भी प्रेम–विषयक होते हैं। ये नृत्य गीत है। इसे गायक–गायिका के दो दलों द्वारा गाया जाता है। यह भी प्रश्नोत्तर–शैली का गीत है।

'बैरगीत' भी प्रश्नोत्तरी–शैली में गाये जाते हैं। ये कुमाऊँ के गीत हैं। इसमें गायक किसी भी घटना या प्रसंग को लेकर गीत गाता है और दूसरे गायक से प्रश्न करता है। प्रश्नोत्तर सम्पूर्ण रात्रि चलता रहता है यदि दूसरा गायक उत्तर न दे पाये तो उसकी पराजय हो जाती है। 'बैर' गायन की समाप्ति पर परिहास व विनोद होता है।

4. ऋतुओं व त्योहारों से सम्बन्धित गीत –

कुमाऊँ–गढ़वाल के मिले हुए क्षेत्रों में चाँचरी गीत अत्यन्त प्रसिद्ध है। यह झोड़ागीत का पुराना रूप है। यह बसंत पंचमी, नाग पंचमी तथा अन्य मेलों के अवसर पर गाया जाता है। इसका वर्ण्य–विषय नायिका–सौन्दर्य, अभाव ग्रस्त नारी जीवन, सामाजिक कुप्रथायें, सुधारवादी भाव, सामाजिक परिवर्तन आदि हैं। इसमें प्रेम–विषयक तत्त्वों की अधिकता पायी जाती है।

'झुमैला' गीत बसंत पंचमी से प्रारम्भ होकर विषवत्–संक्रान्ति तक गाये जाते हैं। इनमें प्रकृति सौन्दर्य और मायके की स्मृति मुख्य विषय हैं। इसमें गायक गोल घेरा बना लेते हैं और बाहों में बाहें डाल कर थोड़ा कमर झुका कर, फिर दो कदम पीछे चलकर कमर सीधी कर मंद गति से चलते हुए गायन करते हैं।

उत्तराखण्ड में दो प्रकार के होली गीत गाये जाते हैं। एक जो आँगन में अथवा रास्ते चलते समूह में गायी जाती है, उसे खड़ी होली और दूसरी जो आँगन में बैठकर गायी जाती है बैठकी होली कहलाती है। खड़ी होली दिन में गोल घेरे में घूमते हुए गायी जाती है, जबकि बैठकी शाम या रात में बैठकर। इन गीतों में उल्लास की प्रधानता रहती है।

चैत के महीने में 'चैतगीत' गाये जाते हैं। कृषि के समय गाये जाने वाले गीतों को हुड़का बौल, कहा जाता है। गुड़ाई के गीत 'गुडौल' कहे जाते हैं। भादौं के महीने में 'ठुलखेल' का गायन होता है। इसमें रामायण की कथा गायी जाती है। छोटे–छोटे बच्चों द्वारा भी गीत गाये जाते हैं। इन्हें बच्चे क्रीड़ा करते हुए प्रसन्नता के साथ गाते हैं।

इसके अतिरिक्त उत्तराखण्ड में जन जागरुकता के अनेकानेक गीत प्रचलित हैं, जिनमें राजनीतिक, धार्मिक, आर्थिक, सामाजिक घटनाओं का चित्रण रहता है।

'सयना' गीत में स्त्रियाँ मायके जाने पर पुराने मित्रों, बचपन के साथियों से मिलने पर गाती हैं। 'ताँदीगीत' केवल पुरुषों के द्वारा गाया जाता है। ये प्रेमपरक व धर्म परक होते हैं। 'खदेड़गीत' करुणा पूर्ण होते हैं जो उन विवाहित महिलाओं के द्वारा गाया जाता है, जिनके माँ, बाप, भाई, बहन आदि नहीं होते। इन गीतों में उनकी भावनाओं की मर्मस्पर्शी अभिव्यक्ति प्राप्त होती है।

गढ़वाल क्षेत्र में चौंफुलागीत विशेष प्रसिद्ध है, जिसका अर्थ चारों ओर प्रसन्नता व्यक्त करने वाला गीत। इसमें दो पंक्तियाँ बना ली जाती हैं और युवक तथा युवतियाँ प्रसन्नता के गीत गाते हैं।

उत्तराखण्ड की लोक–गाथाएँ

लोक–गाथा लोक–विश्वास पर आधृत होती है। इनके वर्ण्य विषय देवता, पौराणिक–कथाएँ, वीर–गाथाएँ, प्रणय–कथाएँ तथा अन्य अनेक लौकिक–जीवन के विश्वासों पर आधारित होते हैं।

देव–गाथा – उत्तराखण्ड में विविध प्रकार की देव–गाथाओं का प्रचलन है–इनमें कुछ गाथा देव–गाथाएँ देवताओं से सम्बन्धित हैं। ब्रह्मा, विष्णु, महेश, लक्ष्मी, दुर्गा, गणेश, कार्तिकेय आदि देवता; मत्स्य, कच्छप, बाराह, नरसिंह, बामन, रामकृष्ण आदि अवतार व सूर्य, चन्द्रमा, नौ ग्रह, कुबेर, इन्द्र, यक्ष आदि क्षेत्रीय व स्थान विशेष के देवता, ऐतिहासिक पुरुष व स्त्रियों आदि की लोक–गाथाएँ, देव–गाथाओं के अन्तर्गत आती हैं। देव–गाथाओं में 'निरंकार' की गाथा सर्वप्रचलित है। 'निरंकार' शिव का प्रतीक है। ये उत्तराखण्ड के सबसे बड़े देवता माने जाते हैं। जब नयी फसल पक कर तैयार होती है, तो प्रथम भाग निरंकार को अर्पित किया जाता है। इस गाथा में शिव की महिमा व आराधाना का गायन है। इसके गायक को 'पाश्वा' कहा जाता है, जो गायन के समय विविध भाव–भंगिमायें बनाता है।

'नागार्जा' में कृष्ण के जन्म से लेकर अनेक बाल–लीलाओं का चित्रण रहता है। यथा–

''छयाँ धेनु का चरैया है, मोहन
व्हेला द्वारिका नन्दन है, मोहन
तेरी नौसुरया मुरली हे, मोहन
व्हेलो रास्यों को रौसिया है, मोहन।''

'नरसिंह' को गुरु गोरखनाथ के शिष्य के रूप में पूजा जाता है। इनकी गाथा में 'नरसिंह' के अलौकिक कृत्यों का चित्रण है।

'भैंरवनाथ' की गाथा का गायन अनिष्टकारी शक्तियों से रक्षा के लिए किया जाता है। इसमें आठ प्रकार के भैंरवनाथ का वर्णन आता है। प्रत्येक के वर्णन के साथ उनके कार्यों को नृत्य द्वारा प्रदर्शित किया जाता है। नृत्य में ढोल, दमामा अथवा डौंरथाली आदि वाद्यों का प्रयोग किया जाता है।

'गोरिलगाथा' के अन्तर्गत सत्य व न्याय के प्रतीक गोरिल देवता की गाथा रहती है। ये चम्पावत में विशेष प्रसिद्ध हैं। 'गंगानाथ' की गाथा में डोटी के राजकुमार गंगानाथ तथा किसान जोशी की पत्नी भाना की प्रेमगाथा जागर गीतों के रूप में गायी जाती है। गंगानाथ की गाथा गाकर बलि चढ़ायी जाती है व पूजा की जाती है। 'पाण्डव गाथा' में पाण्डवों से सम्बन्धित विविध रोचक कथायें प्रचलित हैं। उत्तरांचल में पाण्डवों की देवताओं की भाँति पूजा की जाती है।

'धारचूला' के छिपुलाकोट नामक स्थान पर 'छिपुला' देवता का मेला लगता है। इसमें सैम तथा हरू दो भाईयों की गाथा गायी जाती है।

'कालसणि' की गाथा कुमाऊँ क्षेत्र के सीमांत अंचल मुनस्यारी में मदकोट के आसपास क्षेत्र में गायी जाती है। ये कृषि एवं पशु की रक्षा करने वाले देवता हैं।

गंगू–रमोला' व 'सिदुवा–विदुवा' की गाथा का क्षेत्र चमोली जनपद है। इसमें भगवान श्री कृष्ण गंगूरमोला इसकी पत्नी मैनावती और पुत्र सिदुवा–विदुवा की गाथा प्रचलित है।

इसके अतिरिक्त देवमांगल, कालबिष्ट, भोलानाथ, मलैनाथ, एड़ी देवता, कालू भण्डारी, माधो सिंह, रणूरौत, भानुभोंपैला, जीतू भरुणा, हीतदेवता, घंटाकर्ण, तीलू रौतेली, चौमू, गड़देवी जियारानी, पंथ्या काला, नन्दा, उफराई देवी, अंछरी आदि देवी–देवताओं की गाथाएँ उत्तराखण्ड में पायी जाती हैं।

पौराणिक–गाथाएँ – पौराणिक–गाथाओं में राम तथा कृष्ण से सम्बन्धित गाथाएँ मुख्य हैं, इसके अतिरिक्त नागराजा कृष्णगाथा, पांडवों का यज्ञ, दुर्योधन गाथा, पांडव वनवास आदि से सम्बन्धित अनेक गाथाएँ प्रचलित हैं।

वीर–काव्यात्मक–गाथाएँ – 'पँवाड़ा' गाथा उत्तराखण्ड का वीर–गाथात्मक काव्य है। इनका मुख्य क्षेत्र गढ़वाल है। 'जगदेव पँवार' की पँवाड़ा–गाथा उल्लेखनीय है। इसमें जगदेव पँवार का कालिका के कहने पर अपना शीशोच्छेद कराने तथा भगवान नारायन द्वारा पुनः जीवित होकर गढवाल का राजा बनने की कथा चित्रित है।

'रुदी–उदी' की गाथा में दो भाइयों की कथा है। रुदी–उदी दोनों भाई कर वसूल कर आ रहे थे मार्ग में रुदी के मन में अपार धन को देखकर लालच आ गया और उसने अपने भाई को मार डाला। कुछ दिनों के बाद उदी की पत्नी के गर्भ से पुत्र–रत्न की उत्पत्ति हुई। उस पुत्र का नाम गढूसुम रखा गया। बड़े होकर उसे अपने चाचा की करनी की जानकारी मिली। उसने अपने पिता की मृत्यु का बदला लेकर अपना राज्य पुनः प्राप्त किया। 'गढूसुम्याल' की गाथाएँ भी प्रचलित हैं। रणजीत–दलजीत की गाथा में कुमाऊँ के दो वीरों को मुगल पठानों पर विजय हासिल करने व उनकी वीरता के किस्सों का वर्णन है।

कुमाऊँ क्षेत्र में प्रचलित 'अजूबा बफौल' की गाथा में 'अजूबा बफौल' को विलक्षण शक्ति सम्पन्न माना गया है। चम्पावत के राजा को पीड़ित करने वाले चार मल्लों को पराजित कर वह गद्दी पर बैठा। 'नारसिंह धना' नामक गाथा कुमाऊँ में अस्कोट के गढ़पति नारसिंह व

उसकी पत्नी धना के जीवन की गाथा है। धना अपने मायके की बहुत प्रशंसा करती थी। वह डोटीगढ़ की रहने वाली थी। एक बार नारसिंह ने डोटी गढ़ को जीतने के लिए आक्रमण कर दिया। किन्तु, वह कालीचन्द से युद्ध करता हुआ मारा गया। धना ने निर्णय किया वह युद्ध करके अपने पति का शव काली नदी के इस पार लायेगी व सती होगी। उसने डोटीगढ़ पर आक्रमण कर दिया। कालीचन्द से युद्ध करते–करते उसकी पगड़ी खुल गयी। कालीचन्द उसका भेद जान गया वह धना के सौन्दर्य पर रीझ गया और युद्ध बन्द कर उससे विवाह करके रानी बनाने का प्रस्ताव करने लगा। धना ने उससे अपनी पति का शव काली नदी के उस पार ले चलने को कहा। जब दोनों बीच धार में पहुँचे धना ने कालीचन्द को डुबो दिया तथा स्वयं नदी पारकर पति की चिता के साथ सती हो गयी।

'रतन चन्द' गाथा में चम्पावत के राजा रतनचन्द की पुत्री सरू का विवाह हंस कुँवर से होने व हंसकुँवर की वीरता का चित्रण है। कत्यूर वंश के राजाओं की गाथाओं में बिरमा कत्यूर की गाथा लोक प्रिय है।

भगुरावैत, कफूफ चौहान, पुरुखपंत हरिडिंडवाण, सकराम कार्की, त्रिमलचन्द लोदी रिखोला आदि की गाथाएँ लोक प्रसिद्ध हैं।

प्रणय–गाथाओं में कुसुमाकोलिन, चन्द्रावली हरण, अर्जुन–वासुदत्ता, 'मालूशाही, गंगानाथ आदि प्रसिद्ध हैं। कुछ अन्य लघु गाथायें भी उत्तराखण्ड में प्रचलित हैं।

उत्तराखण्ड की लोक–चित्रकला

यहाँ के धार्मिक विधि–विधान तथा अन्य सामाजिक अवसरों पर चित्रों को महत्त्व दिया जाता है। ये आँगन को मिट्टी या गोबर से लीप कर भीगे चावल से बनाया जाता है। द्वार पर ऐपण गेरू से बनता है। यहाँ देहली अलंकरण विशेष प्रसिद्ध है। इसके अतिरिक्त भित्ति चित्रण भी मिलते हैं। ऐपण के अतिरिक्त ज्यूंति, दुर्गाथापे, पट्टचित्र, द्वार–पत्र, जन्म–पत्री एवं पोथी–पत्र, वेदी–अंकन, हाथ के छापे, सेली कपाल पर खोपड़ियों का अंकन, पिछौड़ा आदि पर भाँति–भाँति के अंकन उत्तराखण्ड की लोक–चित्रकला के अन्तर्गत आता है। ये चित्र मुख्यतः

रेखा–प्रधान शैली, ज्यामितीय अंकन–शैली, आकृति परक–शैली, उकेरण–शैली, पूरक–शैली, अर्द्धपूरक–शैली, बहाव–शैली, छापा चित्र–शैली, प्रतीकात्मक–शैली आदि में बनाये जाते हैं।

ये चित्र विभिन्न धार्मिक अवसरों यथा – दूर्गापूजन, जन्माष्टमी, गोवर्धन पूजा, गंगा दशहरा, लक्ष्मी पूजन, हरषेनी एकादशी, हरबोधिनी एकादशी आदि के अवसर पर तथा विभिन्न रीति–रिवाजों एवं संस्कारों, यथा–षष्ठी महोत्सव, नामकरण–संस्कार, चूड़ाकर्म–संस्कार, विद्यारम्भ–संस्कार, यज्ञोपवीत–संस्कार, विवाह आदि संस्कार आदि के अवसर पर बनाये जाते हैं।

उत्तराखण्ड के लोक–नाट्य

यहाँ लोक–नाट्य परम्परा में रामलीला का मंचन सर्वाधिक लोकप्रिय है। अन्य पौराणिक नाटकों के साथ जीतू–बगड़वा, तीलू–रौतेली, रामी और माधो सिंह भण्डारी नाटकों का भी समय–समय पर मंचन होता है। यहाँ लोक–नाट्य में स्वांग शैली को अपनाया जाता है।

इसमें एक विशेष वर्ग के पेशेवर लोग अपने इन नाट्यों को विभिन्न स्थानों पर प्रदर्शन करते हैं। ये स्वांग के आयोजन के लिए किसी गाँव में डेरा डालते हैं तथा अपने रहने व मंच की व्यवस्था करते हैं। इस मंच की विशेषता यह है कि बाद्दी परिवार के स्त्री–पुरुष ही अभिनय करते हैं। जो महादेव–पार्वती का स्वांग करते हैं। इनका उद्देश्य सामाजिक बुराइयों पर चोट करना है तथा लोगों का मनोरंजन करना भी है। समुचित संरक्षण न मिलने के कारण यह कला समाप्ति की कगार पर है। कतिपय दूरस्थ स्थानों पर ही यह कला दृष्टिगत होती है।

उत्तराखण्ड के लोक–नृत्य

यहाँ विविध उत्सवों, धार्मिक अनुष्ठानों, पूजा, मेले, कौतिगों एवं मंगल अवसरों पर नृत्यों का आयोजन होता है। यहाँ अनेक प्रसिद्ध लोक–नृत्य हैं – यहाँ के धार्मिक नृत्यों में पाण्डव–नृत्य अपना विशेष स्थान रखता है। इसमें वाद्य–यन्त्रों की ताल के साथ महाभारत के

प्रसंगों का गायन होता है तथा साथ ही दोनों हाथों को कोहनी के बल मोड़कर नाचने की प्रथा है।

शक्ति की प्रतीक विभिन्न देवी–देवताओं यथा–महाकाली, भगवती, नंदा, उफराई देवी के जागर नृत्य अति दर्शनीय होते हैं। देवी की आत्मा स्त्री, पुरुष किसी में अवतरित हो जाती है और नृत्य आरम्भ हो जाता है।

उत्तराखण्ड में नागजाति का नृत्य नागराज कहलाता है। इसमें डौंरथाली बजाकर कृष्ण के लीला का गायन करके अभिनय करते हुए नृत्य किया जाता है। यहाँ के धार्मिक नृत्यों में नरसिंह–नृत्य, भैरव–नृत्य तथा स्थानीय देवी–देवताओं–श्वेल, सैम, गंगानाथ और गमरा आदि की गाथाओं का गायन करके भाँति–भाँति की मुद्राओं में नृत्य किया जाता है।

अतृप्त आत्माओं के नृत्य का प्राचीन परम्परागत लोक–नृत्य है। कुमाऊँ का छोलिया तथा गढ़वाल का सरौं एक ही प्रकार के नृत्य हैं। यह युद्ध में विजय प्राप्त करने के बाद खुशी का नृत्य है। छोलिया–नृत्य में ढाल तलवार को चलाते हुए किया जाता है।

छपेलिया युवा नर–नारियों का युगल नृत्य है। इमसें स्त्री–पुरुष दोनों नृत्य करते हैं। यह मुख्यतः प्रेमी–प्रेमिका का नृत्य है। गढ़वाल–कुमाऊँ की सीमा में यह अत्यन्त लोकप्रिय है। इसका आयोजन मेले के अवसर पर होता है।

गढ़वाल–कुमाऊँ की सीमावर्ती क्षेत्र में चाँचरी लोक–नृत्य बहुत प्रसिद्ध है। यह सामूहिक–नृत्य–गीत शैली है। पूर्वी गढ़वाल और अल्मोड़ा का प्रसिद्ध लोक–नृत्य झोड़ा है। यह होली के बाद अत्यन्त उमंग से किया जाता है इसको चैती झोड़ा के नाम से जाना जाता है। गायक हुड़क की थाप व लय के साथ गीत आरम्भ करता है और सभी लय व ताल के साथ पद संचालन करते हैं।

कुमाऊँ के अस्कोट पट्टी में आठूँ के अवसर पर हिनचित्तल नामक लोक प्रिय नृत्य होता है। पिथौरागढ़ जनपद में ठुलखेल, गढ़वाल में थड़या–नृत्य तथा चौंफला–नृत्य आदि विशिष्ट स्थान रखते हैं।

होली–नृत्य भी इस अंचल में प्रसिद्ध हैं, जिनमें ब्रजमंडल के गीतों का गायन होता है। टिहरी एवं उत्तरकाशी से लगे रवांई जौनपुर क्षेत्र में छोपती–नृत्य प्रसिद्ध है। छोटी लड़कियों का नृत्य छिन्नरपाती है। दीपावली के अवसर पर भैला–भैला नृत्य होता है। इसके अतिरिक्त बाँछड़ो–नृत्य, बाजूबन्द–नृत्य, तांदी–नृत्य, लामण–नृत्य, बनजारा–नृत्य, सयना–नृत्य, ढूरिंग–नृत्य, चैती–नृत्यगीत, ढोल–नृत्य, लांगल–नृत्यगीत, हुड़क्का–नृत्य, थाली–नृत्य आदि उत्तरांचल के प्रसिद्ध लोक–नृत्य हैं।

उत्तराखण्ड के लोक–संगीत

'ढोल सागर' यहाँ के लोक–संगीत का प्रमुख शास्त्र है। इस ग्रंथ में ढोल अर्थात् संगीत की उत्पत्ति का वर्णन है। इसे एक कथा के रूप में प्रस्तुत किया गया है। बढ़ै (बधाई), घुँयेल, रहमानी ताल, नौबत, चरितालिम्, आदि ताल हैं।

उत्तराखण्ड के लोक–वाद्ययन्त्र

संगीत और वाद्य का अटूट सम्बन्ध है इस क्षेत्र में जो लोक–वाद्ययन्त्र प्रयोग होते हैं वे इस प्रकार हैं–ढोल, दमाऊँ, डौंरथाली, हुड़क, या हुड़की, तुरी और रणसिंघा, बाँसुरी, मसकबीन, मोंछग, उफली, झाल, इकतारा, सारंगी, शंख आदि।

भूमण्डलीकरण के इस दौर में आज का युवा ग्राम्य जीवन को छोड़कर नगर की चकाचौंध की ओर आकर्षित हो रहा है। सुख–सुविधाओं के उपभोग की होड़ ने मानव का वास्तविक सुख छिन्न–भिन्न कर दिया है। आपाधापी, भाग–दौड़ के युग में जीवन–यापन के लिये अधिकाधिक धन की आवश्यकता है फलतः लोक–कलाओं पर जीविका सम्भव नहीं। यही कारण है कि आज युवा गाँवों से पलायन कर रहे हैं व लोक–कलाओं का लोप होता जा रहा है। आज युवाओं की रुचि इस दिशा में कम होती जा रही है। लोक–गीत व नृत्य आदि रीमिक्स होकर अपना मौलिक आकर्षण खोते जा रहे हैं। अतः इनके संरक्षण के लिये सरकारी व निजी संस्थानों की सहायता की आवश्यकता है। वर्तमान समय में नगरीय–पलायन रोकने के लिये गाँवों में ही रोजगार के अवसर उपलब्ध करवाने, कृषि–सम्बन्धी आधुनिक तकनीकों

का युवाओं को प्रशिक्षण, स्वरोजगार हेतु प्रेरणा आवश्यक है, ताकि गाँव में भी व्यक्ति सुखी व समृद्ध रह सके। लोक–साहित्य व लोक–कलाओं के प्रति युवाओं का लगाव बना रह सके, इसलिए सुखी, समृद्ध व तनाव रहित वातावरण उत्पन्न करना आवश्यक है। इसके लिए अपनी संस्कृति की जड़ों से जुड़े रहने की आवश्यकता है। गौरवशाली देव–संस्कृति की समृद्ध विरासत से अनमोल रत्न खोजने की कला हमें जीवन और जगत के वास्तविक सुख से परिचित कराती है। तत्पश्चात् होने वाली आनन्द की अनुभूति से ही जनमन को रंजित करने वाले लोक–गीतों, लोक–गाथाओं, लोक–कथाओं व लोक–कलाओं का जन्म होता है। आधुनिकता के दौर में परम्परागत इन कलाओं के संरक्षण हेतु सरकार व अन्य संस्थाओं को सार्थक प्रयास करने होंगे, तभी इन्हें विलुप्त होने से रोका जा सकता है।

निष्कर्ष :–

संस्थानों को बढ़ावा देने के लिए लोक कला प्रदर्शन के लिए सरकारी सहायता मिलनी चाहिए। गीत, नृत्य, संगीत, रंगमंच हेतु युवाओं की सहायता करनी चाहिए। लोक–साहित्य व कला के बारे में जानकारी हेतु उचित संरक्षण दिना जाना चाहिए। माता–पिता बच्चों को लोक–कलाओं के सीखने के लिए प्रेरित करें। राज्य द्वारा लोक–कलाकारों को उचित पारिश्रमिक दिया जाए, यदि इस प्रकार समुचित–व्यवस्था हो तो सम्भव है कला व साहित्य का सामान्य विकास हो सके।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. उत्तरांचल हिमालयः महेश्वर प्रसाद जोशी कु0 ललिता जोशी,
–श्री अल्मोड़ा बुक डिपो, अल्मोड़ा, 1994
2. उत्तरांचल की लोक–गाथायेंः डॉ0 दिनेश चन्द्र बलूनी,
–हिन्दी साहित्य निकेतन–16 साहित्य बिहार, बिजनौर, 1997
3. गढ़वाली लोक–साहित्य का विवेचनात्मक अध्ययनः डॉ0 मोहनलाल बाबुलकर,

–हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, 1964

4. कुमाऊँ गढ़वाल की लोक–गाथाओं का विवेचनात्मक अध्ययनः प्रयागजोशी,

–प्रकाशक – डिपो बड़ा बाजार, बरेली, 1986

5. गढ़वाली लोक–गीतः डॉ0 गोविन्द चातक, जुगल किशोर प्रकाशन, देहरादून।
6. लोक–संस्कृति–विशेषांकः सम्मेलन–पत्रिका, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग।
7. लोकधर्मी कलाः मोहनलाल बाबुलकर, भारतबंधु प्रकाशन, इलाहाबाद, 1967।
8. आजकलः आदिवासी अंक।